सेनापतिऊदल ॥

दुःखान्त

नाटक

जिसमें

'रानी दुर्गावती', 'राघौजी अलीवर्दी', 'भाग्य चक्र', 'महोबा-संग्राम', 'क़ासिम कुंसुमावली', 'मित्र-परीक्षा', 'मद्य-लीला', 'नृसिंह-लता,' 'हल्दी घाटाकी-तलवार', इत्यादि पुस्तकों के रचयिता ॥

श्रीवृन्दावनलालवर्म्मा रचित ॥

प्रथमवार 12

लखनऊ

...ेट बाबू मनोहरलाल भार्गव के प्रबन्ध से

...ोर (सी. आई. ई.) के छापेख़ाने में छापागया

DRAMATIS PERSONAE.

नाकस्थ पात्र ॥

पुरुषगण.

सूत्रधार .... नाटक रचयिता ।
सेनापति ऊदल .... राजा युद्धवीर का छोटाभाई, रन्थम्भोर का सेनापति, नाटक का नायक ।
यशोधर्मन .... उज्जैनका प्रसिद्धनृप ।
युद्धवीर .... रन्थम्भोर का राजा ।
वज्रदण्ड .... सेनापति ऊदलका जुड़वां भाई ।
मिहिरकुल .... प्रसिद्ध हूण-नायक ।
...मार .... सहकारी हूण-नायक ।
लोहदण्ड .... हूणपद-सेनापति ।
मन्त्री, साहूकार, दूत, पुहरी, भांड़ और डुग्गी पीटने वाले ।

स्त्रीगण.

नटी .... सूत्रधार की सहायका ।
उमा .... सेनापति ऊदल की प्रियतमा ।
रानीपद्मावती .... युद्धवीर की रानी ।
चन्दो .... कुटनी ।

स्थान.

रन्थम्भोर, उज्जैन और कहरोर ।

पर्दे (Scenes) ।

राजदरबार, राज-पथ, गृह या महल, बन पर्वतमें छावनी के डेरे, महलसे सटा ...ा उद्यान (‘ गृह या महल ’ भी इसका काम देदेगा) बन--पर्वत, छावनी में ...न्दीगृह, (‘वन पर्वत में छावनी के डेरे’ का पर्दा भी काम देदेगा, केवल उस में ...क बन्दीगृह तय्यार करलेना पड़ैगा) मैदान (छावनी के डेरे का पर्दा काम दे ...कता है, बन पर्वत भी उपयुक्त होजायगा) उद्यान । सुभीते के अनुसार पर्दे टांगे जासक्ते हैं । उनका उल्लेख व्यर्थ है ॥

निवेदन ॥

यह नाटक ऐतहासिक है, पर इस में कुछ बातें उस समय के इतिहास से सम्बन्ध नहीं रखतीं, जब कि हूणों का आक्रमण हुआ। मूल दुःखान्त कथाको कोई १०० । १५० वर्ष होगये हैं। यही कारण है कि, हम टाइटिल पेजपर 'ऐतहासिक, नहीं लिखसके। असल में है यह ऐतहासिक।

८ सितम्बर १९०७ }
गरौठा। बुन्देलखण्ड }

निवेदनकर्ता।
श्री वृं. प्र. ला. वर्म्मा।

(४ अगस्त १९०७ को आरम्भ कियागया और ७ सितम्बरको पूर्णकियागया।)

ओ३म्

ऊदल उमा ॥

प्रस्तावना ॥

रङ्ग-भूमिं ॥

नान्दी ॥

अघियनहू कहँ शरणदै, काटत पाप कठोर।
जयति हृदय पावन करन, दारन दुष्ट करोर ॥

(सूत्रधार आताहै)

(खेमटा)

सूत्रधार। जय जय राधा के चितचोर। गोपिन् ताप मिटावनहारे मधुमय रसमें बोर, भक्तन कहँ सुख देवनहारे दुष्टन दण्ड कठोर। जेहि कृपासों गोपीं तारीं काटे पाप करोर, ओहि कृपासों हे करुणा-निधि ! देखो मेरी ओर।

अहा ! ठण्डी ठण्डी मन्दवायु मस्तक के विकारों को दूर कर ज्ञान तन्तुओं को कैसा प्रबल कररही है ! जैसे वर्षाऋतु की आईहुई नदी आसपास का कूड़ा कचड़ा बहालेजाकर पृथ्वी शुद्धकर जाती है, उसीतरह यह वायु भेजेमें हृदयसे नवीन रक्त पहुँचाकर विकारों को धोरही है। यही कारण है कि, आज इस हरेभरेपनके कारण बादलों की

तरह भीतरी आँखों के नीले और स्वच्छ आकाशपर नये नये विचार दौड़े चलेआते हैं, देखें गम्भीरता की सरदी पाकर, कौनसा बादल ठहर कर रङ्ग बरसाता है? (घूमकर) अहा, रङ्गभूमि की सजावट, शौक़ीन और मनचले दर्शकों की उत्कण्ठा चित्तको और भी उत्साह देरही हैं। इस रङ्गभूमि को देखतेही न जांने किसकोने से यह कालीघटा उठआई है? हा! प्राचीन समय के बलिष्ठ, लड़ाकू, धीर, वीर और विद्वान् पवित्र आर्य्य महात्माओं का चित्र सामने फिर गयाहै! वह देखो, भरतमुनि नाटकका प्रपञ्च रचकर, उसकी व्याकरण, औरअभिनय–प्रणाली तय्यार कर उसके प्रचारकेलिये कैसे उत्सुक होरहे हैं! वह देखिये जङ्गम प्रकृति के दर्शन शास्त्री पहिले इससे घृणा देखाकर, पीछे इसपर अपनी उमङ्ग की भी सनद देरहे हैं! अहाहा! वह देखिये पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण भी नाट्यकला में प्रवीणहोने का प्रयत्न कररहेहैं! प्रयत्नही क्यों, वे स्वांग भी तो बहुतअच्छा भरते हैं! वह देखिये, और भी बहुतसे राजे महाराजे इस विद्याको शिरोधार्य्य करतेहैं; इसे अपनातेहैं; व छिपातेहैं औरइसका संरक्षण करते हैं! एक दृश्य और भी आँखों के

सामने फिरगया! इसे भी देखिये, परम पण्डित, महाविद्वान्, प्रसिद्धनाटककार कालिदास एकान्त में बैठकर कुछ लिखरहे हैं। हाँ, हाँ, उनकी लेखिनी से 'शकुन्तला' और 'मृच्छकटिक' नामक अमृतकी बूंदें टपकरही हैं। वह देखिये, विद्वद्वर्य, महाराज विक्रमादित्य के सामने बड़े बड़े राजे स्वांगभरके 'शकुन्तलाका अभिनय कररहे हैं। हा! यह दृश्य भी इन पापी नेत्रों के सामने अधिक समयतक न ठहरा! हाँ, हाँ, यह देखिये महाराज शिलादित्य अपना दूसरा नाम श्रीधर रखकर एक हाथमें 'रत्नावली' लियेहुये दिखारहेहैं कि, अब नाटकविषयका अन्तहुआ चाहता है! भवभूति और बाणभट्ट भी एक सभामें बैठे अपने नाटकोंका राजों महाराजाओं; यहांतक कि सम्राटों के द्वारा कियाहुआ अभिनय देखरहे, हैं! (निराशहोकर) पर हा, ये सबदृश्य लुप्तहोगये केवल मरुभूमि में एकाध घासका चकत्ता 'धनञ्जय विजय' दिखाई देरहा है। (घबराकर) अब वहभी होगया! हा, संस्कृत माता फटे कपड़े पहिने रोरही है, पर अबभी उसे कुछ आशाहै। उसे अपनी प्रिय पुत्री 'हिन्दी' से बहुत कुछ आशाहै, पर वह आशा तो बहुत बारीकधागे

पर बँधीहुई है। वह पुत्री भी अभी निरी बच्ची है; इससमय वह तोतली बोलीही बोलकर अपनी माता को थोड़ा बहुत तुष्ट करसक्ती है, पर इसमें अपराध किसकाहै? भारत के कृतघ्न कुपूत उस बच्चीको खानेतक को तो देतेनहीं बिचारी बढ़े कहांसे! अस्तु, हमारी आँखें अब फिर कुछ लह लहा उठीं, वह देखिये, सामने हरिश्चन्द्र अपने मधुर नाटक लिये हुये खड़ेहैं, उधर श्रीनिवासदास दोनों हाथोंपर 'रणधीर प्रेममोहिनी' और 'संयोगतास्वयम्बर' नामक मधुके घड़े लिये हुये खड़े हैं, पर हा, कोई उनका चखनेवालाही नहीं दिखाई देता! लोग इन महात्माओंका नामतक नहीं जानते। वह देखिये मूर्ख और महागँवार रईसों और राजाओं का धन-प्रवाह भाँड़ और रण्डी नामके समुद्रों में जाकर भ्रष्ट और पतित होरहाहै! हाय, इस दुर्दशाको देखकर कलेजा फटाजाताहै और गला भराआता है! भारतवासी हरतरह से ख़राब होरहेहैं। बालविवाहने उनको नपुंसक सा बनाकर उनकी रुचि मिट्टीकरदी है! वे हरतरह के दुर्व्यसनोंमें फँसते चलेजातेहैं। आलस्य इनका गुरुहै। उसने इन्हें यहमन्त्र पढ़ायाहै और यह

पट्टी पक्की करादी है कि, उद्योग, उत्साह, वीर्य्य-रक्षा, धर्म्मपालन, कर्तव्य निष्ठता, इतिहास पठन पाठन, स्वदेशभक्ति, स्वतन्त्रता, साहस, सत्य, धैर्य्य, वीरता, व्यायाम, स्फूर्ति इत्यादि गुण जो कि प्रत्येक गिरीहुई जातिको उठाने और सँभालने के प्रधान तत्त्व हैं तुम्हारे शत्रुहैं, इन्हें कभी न अपनाना। भारतवासी गुरुभक्त भी पूरेहैं; कहांतक कहें उनमें कुत्ते, गदहे और स्यार के भी गुणनहींहैं ! हां, हन्त ! क्या शोचनीय अवस्था होगई है !

(यकायक नटीकाप्रवेश.)

नटी। (स्वागत) आज आर्य्यपुत्र बड़े मलीन मालूम होते हैं। घरसे जब निकले, तबतो बड़ेप्रसन्न बदनथे। इस परिवर्त्तनका क्या कारण होसक्ताहै? इसके लिये कारण की भी क्या आवश्यकता ? मनोवेग समुद्रकी लहरोंसा होताहै। कभी इधर कभी उधर; अस्तु पूंछें तो। (प्रकट) कहिये, आर्य्यपुत्र, इस बहार में भी मलीनताका क्या कारण ? क्या सूर्य्योदयके समयभी कमलका सङ्कोच करना भला मालूम होताहै ?

सूत्रधार। प्यारी, आज चित्तने यकायक पल्टा खाया, भारतवर्षकी दशा सोचते२ मेरीभी यहदशाहोगई।

नटी। प्यारे, भारतवर्ष की दशा सुधरे कहाँ से ? एक सहस्र मनुष्यों में कठिनतासे एक पढ़ाहुआ मिलैगा। फिर वह भी ऐसा कि, उसकी रुचि अपनेदेश और अपनी भाषा के साहित्यकी ओर बहुत कमहोगी; उन्नतिहो कहाँसे ? अस्तु, भारतवासियोंका सुधार नाट्य-विद्यासे बहुत कुछ होगा। उनके विचार ऊँचे होनेलगैंगे, उनकी आत्मा स्वाधीनता और स्वतन्त्रता की सुगन्धि से भरनेलगेगी। मनोमङ्ग और प्रकृत-प्रवाह का परिवर्त्तन करना अत्यन्त उत्कट उपन्यास और नाटकके हाथमें है। इन दोनोंमें नाटक श्रेष्ठ है। इसका प्रभाव पत्थरकी लकीर होजाता है। हर पढ़े और अनपढ़े के ऊपर इसका प्रभाव पड़ताहै, इसका सबसे मोटा प्रभाव आत्माभिमान है, और यह आत्माभिमानहीं है जिसकी सहायता से पशु पशु और मनुष्य मनुष्य बनताहै।

सूत्रधार। प्यारी, मुझे कहते लज्जा आतीहै कि, देशमें गुणग्राहकोंकी ऐसी कमी है जैसे पानीकी पत्थर में। अभी हाथमें एक विद्वान्‌ने प्रसिद्ध अङ्गरेज़ दार्शनिक जान सुअर्ट मिलकी थिबर्टी नामक पुस्तक का हिन्दीमें 'स्वाधीनता' के नाम से अनुवादकिया। अनुवाद रुचिपूर्ण और अत्यन्त

मनोहर व हृदयग्राही हुआ। जापानमें भी एक विद्वान्‌ने इस पुस्तकका अनुवाद जापानी भाषा में किया था। जापानी विद्वान्‌का स्वयं जापान सम्राट्‌ने आदर सत्कारकिया और उस देशके रईस और धनाढ्योंने उसे धन से पूर दिया,पर अभी तक हमारी 'स्वाधीनता' की भनक भी 'पढ़े लिखे' तक रईसों में नहीं हुईहै! सच है, 'नक़ारख़ाने में तूतीकी आवाज़'! भारतजाय भाड़में, भला इन्हें क्या पड़ा? आलस और मद में मस्त पड़े रहते हैं। अफ़ीम का गोला और बूटीका रङ्ग, बस येही इन्हें स्वर्गकी अलभ्य बस्तुएँ प्रतीतहोती हैं! छिः, छिः!

नटी। नहीं, नहीं, ऐसा न कहो। वे अवश्यही ऐसे नीच नहीं हैं जो अबभी न जागें।

सूत्रधार। अच्छा तो किस नाटकका अभिनयकरें? (कुछ सोचकर) अभी हालमें नवीन नाटककार श्रीवृन्दावनलालवर्म्मा ने "सेनापति ऊदल" नामका एक दुःखान्तनाटक रचाहै। उसीका अभिनय क्यों न करें? दुःखान्तनाटकका प्रभाव सुखान्त नाटकसे अधिक पड़ताहै, और फ़िर यह नया भी है। इसीका अभिनय करना चाहिये।

नटी। हां, हां, इसीका अभिनयकरो; क्योंकि हिन्दी में

एक तो नाटक संख्याही इनी गिनी हैं, दूसरे दुःखान्त 'रणधीर प्रेममोहिनी' सरीसे एकाधही हैं। चलो मनबहलावके बहाने इसी से कुछ शिक्षादें और लें।

सूत्रधार। अच्छाहै, नाटक-पात्रोंका शृङ्गारकरकेरङ्गभूमि में रङ्ग बरसाना चाहिये। दर्शकगण बड़ी देरसे बैठे बैठे अकुलारहे हैं। चलो।

नटी। चलिये। [प्रस्थान।

इति प्रस्तावना॥



पहिला अङ्क ॥

पहिला गर्भाङ्क ॥

रन्थम्भोर ॥

राज-दरबार ॥

(राजा युद्धवीर, सेनापति ऊदल दो दरबारी और हूण-दूत बैठे हैं।)

युद्धवीर। हूणोंसे युद्ध करने में युद्धवीर क्षत्री कब चूके हैं? क्या बौद्ध, क्या यादव और क्या शक—चाहे सबही तुम्हारी सहायतापर हों, पर जिससमय क्षत्री खड्ग रणमें म्यानसे बाहर होगा, उससमय उन्हें तुम्हारे मृत शिरोमणि और अत्तिल भी नहीं जीतसक्ते।

हूण-दूत। सूर्यको अपना आतङ्क जमाने और गर्मी फैलाने में किसकी आवश्यकता होतीहै! सरिता के प्रबल प्रवाहको कौन रोकसक्ता है? समुद्रकी उथल तरङ्गोंका जहाज़ कब पार पासक्ता है? बीर हूण जातिको किसकी सहायता की आवश्यकता है? दूत भेजकर चेतना देनेका नियम तो हम लोगोंने भारतमें आकर सीखा है; नहीं तो हम लोग तलवार खींचे चाहे जिस देशपर टूटपड़ते हैं और सबकुछ तहसनहस कर डालते हैं। हमलोग कन्नौजतक अपनी विजय पताका उड़ाते चलेआये हैं; क्योंकि हमारी बिकट तलवार और अग्निको कोई नहीं रोकसका। कन्नौज के बाद

आपका राज्यजान और राजनैतिक तत्त्व पहिचान, आपको आश्रित राजा बनाने आये हैं; क्योंकि हमें सम्पूर्णदेशका नाश अभीष्ट नहीं।

युद्धवीर। हूण-दूत! तुझे अभी यह नहीं मालूम कि, तू किस देशमें आयाहै? तक्षशिला, गान्धार, पंजाब और कन्नौजको परस्परकी फूटसे जीतपाया होगा, पर रन्थम्भोर लोहेका चनाहै।

हूण-दूत। (क्रमसे तलवार, पानी, अग्नि और घास सामनेरखकर) यदि आप हमारी शरण में आकर हमारे आश्रित नहीं बनते तो लीजिये आपकेऊपर हम पहाड़ ठेलते हैं। (तलवार दिखलाकर) इस तलवार से संग्राम में तुम्हारे शिरोंकी खेती काटी जावेगी; गर्दने भुट्टेसी उड़ादी जावेंगी। जब इस देशके सब पुरुष मारडाले जावेंगे, जब यह धरती निर्वीर्य्य करडाली जावेगी, तब बर्सों के कामातुर हूणलोग—बलिष्ठ और लड़ाकू हूण लोग तुम्हारी स्त्रियों अत्रियों और भगनियोंपर हाथ साफ़ करेंगे, और इस देशको हूणदेश बनादेंगे। (पानी दिखलाकर) यदि तुमलोग रण से भागकर जलकी शरणलोगे, तो तुम्हारे वरुणदेवता पहिले से हमारी क़ैदमें हैं, वहां भी न बचने पाओगे, (अग्नि दिखाकर) यदि वन पर्वतों की शरणलोगे तो यह अग्नि तुम्हें वहीं भस्म करडालेगी और इसीकी सहायता से हम तुम्हें अन्धकार में भी खोज खोजके चूर्ण करेंगे,

(घास दिखाकर) यदि शरण में आजाओगे। तो इसी घासकी रस्सियां बनाबना तुम्हें बांधेंगे और यही घास तुम्हें खिलाखिलाकर वीर्य्य-हीन कर शनैः शनैः मौतके मुँहमें ठेलेंगे। तुम्हारे ऊपर पहाड़ गिराचाहता है; समुद्र बहाचाहता है। तुम्हारा सत्यानाश होगा। हम बिदाहोते हैं। (बायेंहाथ से जुहारकर और तलवार की नोक पृथ्वीमें छेदकर) यही तलवार तुम्हारा, तुम्हारी जातिका और तुम्हारे देशका शिरोच्छेद करेगी।

(गमनोद्यत)

सेनापति ऊदल। (पृथ्वीपर पैर पटककर तलवारखींच, पैंतराबदल, सदर्प्प) रे कायर, ढीठ हूण, क्या तूने क्षत्रियों की बिकट खेड़ीका नाम नहीं सुना? रे अधर्मी जातिके भ्रष्ट दूत, जिस तलवार की तू ऐंठ बघाड़ता है, वही तलवार इस देशको हूण-हीन करेगी। हमलोग तुमलोगों को चारों ओरसे घेरकर, क्रमशः, पानी और अग्निसे मारेंगे। क्या तूने बालब्रह्मचारी क्षत्रियों को कभी देखाहै? जिनकी देह सदा व्यायाम, मल्ल-युद्ध और पटा-प्रक्षेपसे लोहा होगई है, जिनकी आँखों के डोरों में शत्रु-सन्तापक लाल रक्त समागया है, जिनकी देहका मांस लम्बी चौड़ी हड्डियों के चौगिर्द, निरन्तर लोहेके प्रयोगसे रस्से के आकारमें लिपटगया है, जिनका ललाट सदा युद्ध करने और उसकी चर्चाकरते रहनेके कारण

त्रिपुण्डाकार मांसकी पंक्तियोंमें विभक्त होगयाहै, जिनकी विशालदेह, लम्बे और लोह-दण्ड हाथ, ढाईहाथ की चौड़ी छाती और साढ़ेतीनहाथ लम्बी और एक बीता चौड़ी व सत्तरहसेर बोझवाली तलवारसाधने और फुर्तीसे चलानेवाली कलाही; इन सर्प जैसी फुङ्कार मारनेवाले नथनों के क्षत्रियोंके इन सामानोंको देखाहै ? ऐसेक्षत्री हमारे यहां अगणित भरे पड़े हैं। अधिक नहीं बढ़ाते, एकक्षत्री एकहूणको एक बगलमें दूसरे को दूसरी में और दोको दोनों हाथोंके लपेटे में इसतरह पकड़ सकताहै जैसे भीमकायसिंह एक दुर्बलमृगको दबोचलेता है। चारहूणों को इस तरह दबालेनेपर भी वह बीरक्षत्री, वह भारत माता का सपूत, वह रन्थम्भोर का गर्व, निरन्तर ८ घण्टे युद्धकर बीस तीस म्लेच्छ हूणों को घांस की तरह काटकर टुकड़े टुकड़े कर सकताहै। रे पिशाचोंके चर, अपने मनुष्यद्रोही स्वामी पज्जारसे कहदेना कि, वह अभीसे लँगोटबन्ध होजावे; क्योंकि वही हूणोंमें एक मर्द और बली गिनाजाताहै। मैं पिशाचके रोमरोम उखाड़ूँगा और तेरी असभ्यजाति को क्षत्रियबीरताका परिचयदूँगा। ख़बरदार, खूब चैतन्य होकर इस देशमें अपने खुरलाना। यहां के बच्चे और यहांकी कोमलाङ्गी "ललनायें तक लड़ना जानती हैं। तुझे नहीं मालूम, तेरी असभ्य और

भ्रष्टजातिको भी नहीं मालूम कि, एक दसबरस का क्षत्रीबालकभी दो हाथकी लम्बी आधाबीता चौड़ी और साढ़ेपांचसेर बोझकी तलवार फेंक सकता है! हमलोग धर्मयुद्धसे लड़ते हैं और धर्म–नीतिका आचरण करते हैं। असभ्यजातिके असभ्यदूत, यदि ऐसा न होता तो तेरी जिह्वा को खण्ड खण्ड करडालते! जा, भाग, रन्थम्भोर की सीमा से तुरन्त दूरहो, नहीं तो कोई क्षत्री बालक तुझे स्वदेशशत्रु और म्लेच्छजान, तुरन्त शतखण्डोंमें खण्डित कर डालेगा।

दोनों दरबारी। उचितहै। उचितहै। दुष्ट और असभ्य के साथ यही बर्ताव उचित है।

दूत। यह सब घमण्ड गिरजावेगा। हूणलोग पुरुष, स्त्री बालक सबको घेरकर, भेड़ बकरीकी तरह काटेंगे। (ऊदलसे) तुम्हारा सन्देशा वीरवर पञ्जार अवश्य सुनेंगे। (हँसकर) यदि तुम्हें उनसे लड़नेमें डर मालूमहो, तो उनके क्षत्री सेवक, उनके सिखायेहुये शिष्य, उनके लड़ायेहुये चेले,ही से लड़कर, एकाधजोड़ उखड़वाकर तृप्त होजाना। रहे क्षत्रीबालक, सो हूण–सैनिक नहीं जानते दया किसवस्तुका नाम है, वेलोग साग पातकी तरह उनकी चटनी बांटेंगे। सावधान! खबरदार! [दूतका प्रस्थान।]

सेनापतिऊदल। (स्वगत) क्या क्षत्रियोंने भी स्वदेशद्रोहकरना सीख लिया है?.हा सर्वनाश! अस्तु

देखेंगे किस वीराङ्गनाने ऐसे कुपूतको जन्मदेकर, क्षत्रियकुल कलङ्कित कियाहै !

युद्धवीर। भाई ऊदल, यदि तुम कहो तो इसदूतको, कुगति करके, यहांसे हूण—छावनीमें पहुंचावें।

सेनापति ऊदल। न महाराज, यह नीति के विरुद्ध है। दूत चाहे कितनाही असभ्यहो, सताया न जावे, वैरी चाहे कितनाही प्रबलहो उसका एकभी घायल सैनिक सुखके बदले दुःख न पावे। इसी प्रकार चाहे सेना कितनीही आपत्ति में दबीहो शान्ति—झण्डा देखकर, फिर कदापि तलवार न कीजावे।

युद्धवीर। (मुस्कराकर) अच्छा भाई, तुमतो बड़ेराजनैतिज्ञहो, युद्ध—विद्या और युद्धनीति भी पूरी जानतेहो; बताओ, अब क्या कर्तव्यहै ?

सेनापति ऊदल। कर्तव्य क्याहै ? युद्ध ! युद्ध ! प्रचण्ड युद्ध ! रणचण्डीके मन्त्रका अनुष्ठानहो ! रक्तकी धारायें बहें। स्वदेश के लिये लोग अपने प्राण दें और रक्तका एक नवीन समुद्र अपनी यादगारीमें बनाकर स्वर्गलाभकरें। बस यहीकर्तव्यहै !

दोनों दरबारी। निसन्देह यही कर्तव्यहै। यही धर्महै ! बस धर्म और देशके रक्षार्थ युद्धहीकी दीक्षाका सबको मन्त्र पढ़ादेना चाहिये।

युद्धवीर। (दरबारियोंसे) कल इसविषयकी डुग्गी पिटवादीजाय, (ऊदलसे) तीससहस्र पैदल और छःसहस्र अश्वारोही शीघ्र तय्यारहों। ये सब

प्रथम द्वितीय और तृतीयश्रेणीके मिश्रित सैनिकहों। क्रमसे प्रथम, द्वितीय और तृतीयश्रेणी आगे पीछे रहें। प्रथमश्रेणी,के आगे चारसहस्रों में से २ सहस्र बज्र-पंक्ति के मनुष्य देंगे। ६सहस्र पैदल २ सहस्र अश्वारोही और २ सहस्र बज्र-पंक्ति इतनी सेना रन्थम्भोरमें सदा तय्यार रहेगी। ज़रासा समाचार मिलनेपर ये सब वीर मैदानमें भेजे जासकतेहैं। अधिक कहनेसे क्या लाभ, तुम स्वयं बड़ेभारी योद्धाहौ, अपने आप व्यूहरचनादिका ठीक करलोगे। अब सभा भङ्ग हो। समय अधिक व्यतीत होचुकाहै।

{सबसे पहिले सेनापति ऊदल तलवारसे जुहार उतार, पैंतरे बदलता, तलवार चमकाता हुआ जाता। पीछे राजा और फिर दोनों दरबारी जातेहैं।}

दूसरा गर्भाङ्क ॥

रन्थम्भोर ॥

राज–पथ ॥

(डुग्गी पीटनेवाला और उसका साथी आताहै)

डुग्गी पीटनेवाला। का आफ़त माँ फसिंलहो, डुग्गीपीटे का कहिथें। सङ्गी, पाइलका कुछ नाहीं, टँगवा तोड़ी तोड़ी फिरिथें। पाइथै, पर डह! डहका? ऊँटके मुँहमां जीरा। भाई परवार लम्बा, रस्सी छोटी। कहिथें, गाँवभर में एक दिनमाँ डुग्गी पीट। भाई, दिनौनाका फेरहै। (हँसकर) अब हम कवि होइथें। कविता याद कीन्हीं, खूबभवा। अब आसाहै।

साथी। भाई, करीका? नौकरीमाँ हाथ पाँव बँध जाइथें। मनकी मनहीमाँ रहिथै। (घूमकर) ढोलपीट भाई, समयोसारो भागत जाइथै।

डुग्गी पी०वाला। (तीनचार ढोल पीटकर) हुकुम राजा का, हुकुम सेनापतिंका, हुकुम देशका। (फिर ढोल पीटताहै) (साथी से) तुम ढोललो हो, हम कविता पढ़ी।

साथी। हाँ, हाँ। (ढोललेता है)।

डुग्गी पीटनेवाला। (गाकर)—

सुनो सुनो सबलोग कहत हम जो कर जुतकर,

खड्ग म्यानसों खींच, लरो अबके सब जीभर।
बहुत दिनासों लोह तुम्हारो नाहीं बाजो।
अब आयो है समय, कमर कसके सब साजो।
तेग शूल औ धनुर्बाण सेलादिक लेवो,
धर धीरज, उर सुदृढ़ करो, निज देशहिं सेवो।
महा म्लेच्छ औ घृणित जाति हूणन की जोहै,
कुटिल भौंहकर, आज वोहि इहि भू कहँ जोहै।
जदपि मनुज, पै दुराचारि औ पूरे पापी;
राक्षस, दानव—अहैं,—यहै सब हमने नापी।
रणमें घायल परे वीर नहिं ये शठमारैं,
धर्म्मनीति औ राजनीति कहँ हठकर जारैं।
फोरैं मन्दिर देवमूर्त्ति औ प्रतिमा नासैं,
हतित वीरकी वीरबधू कहँ बरबस फाँसैं।
नर नारी, बालक आदिन कहँ निर्दय मारत;
गाँव, नगर, विद्यालय—सब, आगी सों जारत!
को ऐसो है कायर, नीच, पतित, इहि जगमें।
जो न दिखावै हित स्वदेश जी देवो मगमें?
काकहँ नहिं है मातृ-भूमि प्यारी? हे जनगन!
को नहिं नारी, बालकहित्त जानत देवो तन?
को है ऐसो नीच जगत में जाकहँ प्यारी,
नहिं स्वतन्त्रता? स्वर्ग्ग—लाभहूसों जो न्यारी!
हिमगिरिसों अतिउच्च; सागरहुसों बढ़के है;
नीली नभसों अधिक; कञ्चनहुसों चढ़के है।
अमिय, सजीवनमूरि; सर्व्व विद्याकी दाता;
तत्त्व ज्ञान आधार; शूरता की है माता।

कायर होवै वीर, वीर अति वीर बनै जिमि।
कहो जगत में बड़ी और का यासों है किमि?
नहिं कहुँ कोऊ अपर वस्तु यासों गुणकारी,
याको वर्णन करत करत सरसुतिहू हारी!
ऐसी जियसों प्रिय स्वतन्त्रता कहँ का खोहौ?
रत्न अमोलहिं खोय, बहुर काको मुख जोहौ?
उठो, उठो सब वीर, धरो ईश्वर इक हिरदय,
(ढोलपिटताहै) व्रत, पूजा, जप आदि तजौ धर यहही
निहचय, खड्ग देवकी पूजाकर, अरिरक्त चढ़ाओ,
अस्थि–खण्डकी मालबना मन मोद बढ़ाओ।
रणचण्डीको मन्त्र साध, देवहिं प्रसन्नकर,
खण्ड खण्ड अरि रुण्ड केरकर, माला खँग धर,
ऐसे पूजा–हित स्वदेश व्रतमें लगजाओ,
रण–कङ्कन भुजबाँध, बसन रणके कस धाओ।
डरौ तनिक जनि हिये, हूण कछु नहीं बली हैं;
वीरआर्य–भुज–बज्र सामने खिली कलीहैं।
सिगरे जगके चण्ड शत्रुहू भारतभूको
'सकत नहीं कर कछू, सदा यहही सब कूको।
भारतभर के वीर आर्य्य एका कर चाहैं,
तौ समग्र भूमण्डल कहँ तुरतहि हथियावैं।
नहिं अचरज की बात कछू यामें है नेका,
जो चाहे सो करै बली है भारी एका।
ओहिं ऐक्य कहँ थाप, नाप यह जीमें करके,
कहैं,–लड़ैंगे, काट करैंगे हिय भर भरके।
हृदय उमँगसों भरो, करो रणकी तय्यारी,

लेओ कर तलवार करनहित भू रतनारी।
करहु प्रतिज्ञा,–हित–स्वदेश तन, मन–सबदेहैं।
जीतेंगे; वा स्वर्ग्ग अप्सरा गण कहँ पैहैं।
हो निसङ्क डङ्का बजाय, झण्डा फहरावहु,
शङ्खा, सिंहा, बजा, बजा, धौंसा घहरावहु।
आर्य्य–मोंछ थर्राय हूण–गण रणमें डाटौ,–
धर्म्म–युद्ध सब करहु अरिन के माथे काटौ।
आलस तज, सब उठो उठो, हे आर्य वीर गन,
अपने देशहितार्थ धार, पन, तजौ प्रान तन।
बोलो खँगकी जय जय खाँड़े की, सेलाजय,
आर्य–मोंछकी जय बलवीर क्षत्रियनकी जय।
साहसधर, हियबाँध, त्यागभय, होके इकलय,
बोलो सब जयभारत जयभारत भारत–जय।

{ घूम घूमकर, कविता पढ़ताहै, और दूसरा ढोल पीटता है। }

पढ़नेवाला। चली, काम तो गइल। भाई, यांणी मारे दरदके सूजिलहैं। गलाकी तौ जस दसा भई, भाई कहिथैं नाहीं बनें। चली, काम हुइगइल।

ढोलबजानेवाला। हां भाई, चली। [दोनोंका प्रस्थान।

तीसरा गर्भाङ्क ॥

रन्थम्भौर ॥

एकरईसकाघर ॥

[साहूकार, साहूकारका पुत्र–'दूल्हा' और भांड़ बैठेहैं]

साहूकार। (स्वगत) हमारादेश–हमारी प्यारी भारत माता सङ्कटमें पड़ीहै! हा! इसका उद्धार कैसे होगा? उद्धार कैसे नहींहोगा! अवश्यहोगा। मैंने अपने पुत्रके अभी बिवाह करने में बड़ी मूर्खता कीहै। रण–मैंदानसे जब यह ढाल लेकर या ढालपर आता, तब देखाजाता पर। हाय! हमारी वृद्धामाता ने न माना। देश में हूणों का आगमन सुनने के कारण हलचल मचगई है। सबकोई स्वतन्त्रता चाहतेहैं; परतन्त्रता किसे प्यारी होगा? जगत् में ऐसा कौन नीच, क्रूर, कायर और मूर्खहोगा, जो स्वतन्त्रता और अपनाही राज्य न चाहेगा? आज देशभर स्वदेश व्रतमें दृढ़है, स्वदेश–रक्षा में निमग्नहै, सबकी तलवारें हूणों के लोहूकी प्यासी होरहीहैं। मेरा कलेजाभी स्वदेश–व्रत के लिये खौलरहाहै, और खौलनाही चाहिये, पर क्या करूँ उमर ढलगई है, बाल पकगयेहैं और त्वचा सिकुड़ गई है। अस्तु, मेरे दो लड़के तो हैं, इसीमें मुझे तोष होगा कि, ये दोनों देशके काम आये!

(भयानक दृढ़तासे नेत्र लाल होजाते हैं)

एकभांड़। (उछलकर) सरकार, देर होती है। कहिये तो फेरकर, हेरकर, टेरभर, सेरचर, पैरधर, सैर करैं ? क्या आज्ञा होती है ?

साहूकार। सुनो, मेरी तबियत खिन्न होगईहै। यहसमय आनन्द मङ्गल मनाने का नहींहै। देशके ऊपर विपद् गिरनेवालीहै, पहिले उसका प्रतीकार हो-जाय, तब खेल, तमाशे हों।

वहीभांड़। सोक्यों ? क्या हमलोगोंका नाम, बिगड़ीहुई प्रकृतिके सुधारनेके काममें सुनाम नहीं पाचुका? क्या इससमय हमारा चाम इस स्वदेशव्रत के काम नहीं आसकता? क्या हमें स्वतन्त्रता प्यारी नहीं ? क्या हम दासत्व स्वीकार करैंगे ? क्या हम स्वतन्त्र भारतवासी नहीं हैं ? अवश्यहैं। और इन्हीं सुविचारोंकी वृद्धि और पुष्टिके लिये आज हम स्वदेश-व्रत और स्वतन्त्रता की दो नक़लें बनालाये हैं। हम उन्हें अवश्य खेलैंगे। नाटकवाले इन्हींबातोंका नाट्याभिनय कररहे हैं, संन्यासी स्वदेशव्रत और स्वाधीनताका उपदेश देते फिररहेहैं, मन्दिरोंमें इसीकी चर्चा रहतीहै, विद्यार्थी झण्डा उड़ाते उड़ाते रणमें निमग्नहोने का सबको उपदेश देते फिरते हैं और सर्व-साधारण को अस्त्र-शस्त्र प्रयोग में प्रवृत्त कररहेहैं। वेश्यायें इसी के गीत गागाकर लोगोंकी रण-रुचि बढ़ारहीहैं। सारांश यह कि, प्रत्येकआर्य,

प्रत्येक शूद्र-सब, स्वदेशव्रतमें हिमालयकीभांति अचलहैं। स्त्रियांतक युद्ध करनेका साहस रखती हैं ! हाट, बाट, कूप, तड़ाग, खेत, खलियान सब जगह साहस, बीरता, उत्साह, उमङ्ग, रण की भयानक उत्सुकता, भयङ्करदर्प, ऐक्य—स्थापन की चर्चा—इत्यादि छटामय दृश्य दिखाईदेतेहैं। सम्पूर्ण देशके कण कण रक्तमें स्वदेश—प्रेम प्रविष्ट होगयाहै। सबलोग युद्धके भिन्न भिन्न ब्योंत लगारहेहैं, सैन्यकी क्या कहैं ? वह तो सैन्यही ठहरी। फिर क्या हमही ऐसे अपराधी हैं जो अपना काम छोड़दें ? क्या आज्ञा होतीहै ?

साहूकार। अच्छा पहिले थोड़ासा गाकर, फिर नक़ल करो। मैं वेश्याओं का गाना नहीं सुनता, इससे तुम्हीं लोग सुनाओ।

वहीभांड़। बहुत अच्छा।

(सोहिनी)

सबभांड़। (मिलकर) देशहित प्राणगँवाओ भाई। जिहि भूसों उत्पन्न भयेहौ वहि भूहित असिलेकर पंक्तिबांध, व्यूहादिक रचके, ठानो घोर लराई। हूणदेवकी पूजापत्री लोहपत्रसों कीजिय, भारत रक्षाकोवर आशो लीजेफिर मन लाई। पराधीनता, सुख, विलासके पुष्प हूणगन देओ दृढ़ता, साहस अरु स्वतन्त्रता लीजिय उनसों जाई। रणचण्डीको मन्त्र साधके, खड्गकुशाकर

गहकर, जय 'भारत' 'जय भारत' बोलौ शब्द महा सुखदाई।

(ढोलपीटते हैं)

दूल्हा। (स्वगत) हाय हमारा बिवाह कैसा कुऋतु में हुआ है। हूण राक्षसों के मारे देश कांप रहा है, भारत माता बिलबिला रही है, पर हम सुख,चैन में मस्तहैं। हाहन्त! हादुर्भाग्य!ये सूखी के मेघ क्या करनेवाले हैं? अहा! स्वतन्त्रता कैसी प्यारी बस्तुहै! जड़ चैतन्य सबही इसके चाहनेवालेहैं। जगत्में कदाचित्‌ही कोई ऐसाक्रूर, कामी, कायर और कच्चेहृदय होगा जो अमूल्य रत्नको खोदेवे; वा उसके पुनः आनेका प्रयत्न नकरे। फिर हम तो भारतबासी हैं;-सभ्यभारतवासी,-स्वतन्त्र और वीरभारतबासी हैं! यह बिवाह एक बन्धन है,पर स्वदेश प्रेमका प्रबल और प्रचण्ड खंजर इसको काट डालैगा, मैं अवश्यही इस जातीय और स्वदेशीय रण-आन्दोलन में योगदूँगा।

(पीलू)

(नेपथ्यमें) उठहु उठहु हेबीर तजहु, ये भोगादिक सब।
भारतमाँ पर सङ्कट भारी पर्‍यो अहै अब।
तज भूषण सबदेहु लोहसों देह साजकर।
करहु न डरसन्ताप, तजौ गृहकहँ ईश्वरपर।
राम,भीम,अर्जुन,भीषमकहँ धर अपने हिय।
खड्ग, शूल, सेलासों भेजो अरिकहँ यमनिय।
धर, धर, लम्बे खाँड़े मचादेहु अब परलय,

बोलो सब इकलयहो, जयभारत भारत जय।
उठो, उठो, सुखबिलास में समय न खोवो।

एकभांड़। बस अब नक़ल न करेंगे, अब रणकी तय्यारी करेंगे, और घर घर जीतीय सङ्गीत सुना, सुना उत्तेजनादेंगे। जब हमारादेश हमाराही न रहेगा, तब तन, मन, धन–ये तीनों हमारे किस कामके? जिस समय स्वतन्त्र भारत जेताहोगा, उससमय नक़लकर जेता और कट्टर आर्य–सैनिकों को प्रसन्न करेंगे। (सबगये।)

साहूकार। (गम्भीरतासे) बेटा, तुम स्वयं समझदारहो, इससे मुझे अधिक नहीं कहनाहै। कहना केवल यही है, यही मेरा सूत्र है कि, तुम सब घर बार छोड़, युद्ध–भूमिकी तय्यारी करो।

दूलहा। (सादर) मुझेभी अधिक नहीं कहनाहै; केवल यह प्रतिज्ञा करताहूँ कि, यदि मैं सचमुच आर्य हूँ; सत्यही भारतवासी हूँ, तो प्राणसे प्यारी स्वतन्त्रता देवी की रक्षामें हारकर, कदापि घर न आऊँगा।

साहूकार। धन्य है! धन्य है! सपूत इसी को कहते हैं
(शीघ्रतासे दूलहाका प्रस्थान।)

चौथा गर्भाङ्क ॥

उज्जैन ॥

राजदरबार ॥

(महाराज यशोधर्म्मन और सेनापति बैठे हैं)

(परज)

यशोधर्म्मन । देश पै विपद परी अब भारी । स्वतन्त्रता को सूरज प्यारो का अब इतनहिं ऊरे ? शस्य पूर का भारत माता हू है अब अँधियारी ? तक्ष-शिला, पांचालनसे हैं, उत्तर-भारत हार्यो, नगर हस्तिनापूर भिख्यो है, शूरसेन पुरिहारी ।

सेनापति । शोक, सन्ताप करना बीर, धीर, दृढ़प्रतिज्ञ और दृढ़तामय साहसी पुरुष का काम नहीं । कहना निरर्थक है, आप स्वयं एक बड़ेभारी विद्वान्‌हैं, आप इनसब बातोंको जानतेहैं । स्वदेश हितैषी रन्थम्भौर ने जिसकाम को उठाया है, उसकाममें हमको भी पूरा प्रयत्न करना चाहिये। रन्थम्भौर ने घड़े में समुद्र भरने का यत्न किया है, पर उसका स्वदेश-प्रेम सराहनीयहै; इसीकारण हमलोग भी पूरी तय्यारी के साथ उसकी सहायता करेंगे ।

यशोधर्म्मन । बीर सेनापति, मैं सन्तप्त नहीं हूं, किन्तु मुझे इस बातका थोड़ासा दुःखहै कि, तक्षशिला,

पाञ्चाल, और उत्तर भारत हूणोंके पैरों के आश्रित होगये हैं। हाय ! हमारे भ्रातागण बिना किसी विचार और विवेक के कुचले जारहे हैं। हृदय बदले के लिये जल रहाहै, प्रचण्ड आर्य-रक्त बिलबिला रहाहै। स्वदेश का उद्धार करेंगे, उद्धार करेंगे।

सेनापति। आपसरीखे वीरोंकेलिये यही क़हना उचित है।

(लावनी)

यशोधर्म्मन। उठहु उठहु हेसेनापति, असि लेहु हाथमें,
हम, तुम–दोऊ करें प्रतिज्ञा बोल साथ में।
एक बार इनहीं हूणनकी एक शाख मिल,
आई भारत लूट करत फेंकत आपति सिल।
ओहि समय जब तक्षशिला औ उत्तर भारत,
भयो जाति–शक सों अधीर औअतिही आरत।
तबहूं मालव–आर्य रोप विद्रोह भयानक,
लाखन कार गिराय, भगाये शेष अचानक।
उनहीं आर्य प्रचण्ड वीर गन के हम बीरज,
धरि हैं हमहूं देशहितार्थ धार हिय धीरज।
उठहु उठहु हे सेनापति, असि लेहु हाथ में,
हम, तुम–दोऊ करें प्रतिज्ञा बोल साथ में।

(यशोधर्म्मन और सेनापति दोनों नङ्गी तलवार हाथ में लेकर शपथ करते हैं)

(लावनी)

दोनों। (मिलकर) करत प्रतिज्ञा नङ्गी असि ले, कर हम दोऊ,

---

१ शक लोगोंका यह आक्रमण ईसवी से ५७ वर्ष पूर्व यानी विक्रमाब्द के आरम्भ में हुआ था।

लरिहैं भारत भूमि हितार्थ आय चह कोऊ।
जो पै यमहू; धर्मराजहू सहस बारकह,
मागैं भारत-भूमि राज्य तो नहिं देवैं चह।
इन्द्र-वज्र ले सङ्ग, उमग, रण करबो चाहैं,
उनहूं देश-हितार्थ लोह को स्वाद चखाहैं।
चाहे अपनी मातृ-भूमि हित प्राणहूं देहैं,
पै स्वतन्त्र भारत कबहूँ परतन्त्र न कै हैं।
चाहे बोटी बोटी कट तन, रन गिरजावै,
हूण जाति पै आर्य-बीर को पार न पावै।
चाहे ब्रह्माहू समभाय, कहैं नहिं जूझौ,
उनहूँ सो इतराय, कहैं-तुम कहँ का सूझो?
लरि हैं, कटिहैं, मरिहैं, जरिहैं अथवा जीतैं,
एक युद्धकी नीति राख, तजिहैं सब नीतैं।

(उत्तेजित होकर) जबलों हूण मलेच्छकार, नहिं मार भगावैं, तबलों भोग विलास पास कबहूँ नहिं जावैं। जबलों आरत भारत को उज्वल सुख नाहीं, करि हैं, तबलों सेजत्याग में सोवहिं भूपाहीं।

(अधिक उत्तेजित होकर) जबलों हूणा न बाहर कर, स्वतन्त्रता साधैं, तबलों शिरकी खुली शिखा कदापि नहिं बांधैं।

(दोनों शिखा खोलकर, तलवार घुमाते घुमातेजातेहैं)

पांचवा गर्भाङ्क ॥

वन पर्वत में छावनी के डेरे ॥

(हूण-नामक मिहिरकुल एकडेरे में उच्चासन पर बैठाहै) सामने सहकारी नायक पञ्जार, पद-सेनापति लोहदण्ड और क्षत्रिय वज्रदण्ड बैठे हैं ।

मिहिरकुल । (स्वगत) आर्यलोग कितनाही लड़ें, कुछ नहीं करसक्ते । स्वार्थ का कीड़ा उनको खाजावेगा । यह जातीय उन्नति की जड़ काटनेवाला है, इसके सामने खेड़ी भी कुछ नहीं; आर्यों का वज्रभी कुछ नहीं । यह आगसेभी बढ़कर प्रचंडहै । जैसे जहाज़ के पेंदे में एक छोटासा भी छेदहोनेपर, उसमें पानी भरजाताहै, और वह इसतरह से नष्टहोजाताहै, उसी तरह जिस जाति में स्वार्थ का एक अंश भी हो, वह अपनी स्वतन्त्रता अधिक समयतक अपने हाथ में नहीं रख सकती, और जो परतन्त्र हैं, वे स्वतन्त्रता कभी नहीं पासकते । इतना निसन्देहभयाहै कि, उन में फूट और वैमनस्य नहीं है; सो इसकी भी कोई चिन्ता नहीं है । पञ्जारको तो सब जानते हैं, लोहदण्डको कोई नहीं जानता । इसपर ऊपरीभाव से रुष्टहोकर, सिखापढ़ा, शत्रुदल में भेजना चाहिये । यह पिशुनोचित कर्म करके आर्यों में फूट और वैमनस्यका बीज बोदेगा

और शत्रुओं के भेद समय समयपर बतलाता रहेगा। अच्छी राजनीतिहै! अच्छा छलहै!

पञ्जार। (मुस्कराकर) रन्थम्भौर के सेनापति ऊदल ने मुझे युद्ध–घड़ी तक लँगोटबन्ध रहने की आज्ञा की है। मल्लयुद्धहोगा, अच्छा देखेंगे।

मिहिरकुल। लँगोटबंध तो कदाचित् सम्पूर्ण सैन्य वर्षोंसे है। (हँसकर) परन्तु अबभयहै कि, इनबलिष्ठों के लँगोटे आर्यों की स्त्रियोंपर शीघ्रही खुलेंगे। भाई पञ्जार! हमारे पिता तिरोमणिने परलोक गमनके समय, मुझ से कहा था कि, बेटा! जिसतरह से हमने लाखों गाँव जलाकर, ऊजड़ करदिये, मनुष्य रक्तबहाकर, सुन्दर और छबीली सरिताओं से भारत--भूमिपरिष्कृत करदी, करोड़ों खेतों की हरी हरी फसलें घोड़ों के लिये काटकर, करोड़ों को प्रसन्नचित्तहो, भूखोंमारा, लाखोंरमणियों का सतीत्व और कुमारपन उतार, उन्हें ककड़ी की तरह कतरडाला लाखों बच्चों को जीतेही जलतेहुये गाँवों की आग में भस्मीभूत करडाला, उसीतरह और उस से भी बढ़कर तुम भी कर दिखाना, तब तुम मेरे सच्चे सपूत कहलाओगे। सहकारी नायक, मैं तिरोमणि की क़ब्रको अपवित्र करूँ और माताको कलङ्कित करूँ, यदि उस से भी कहीं बढ़कर दृश्य न कर दिखाऊँ।

क्षत्रियवज्रदण्ड। महानुभाव, हूणेश! यह वज्रदण्ड

आपको आर्यों के अच्छे अच्छे गावोंकी सैरकरावेगा। उनमें आर्यों के बड़े बड़े पुस्तकालय, विद्यालय और विहार--उद्यानहैं। ये सूखी आंखें तब शीतलहोंगी जब ये उन्हें प्रचण्ड अग्नि के साथ धुआँ बनकर खेलताहुआ देखलें। मैं सब मार्गों के पते जानताहूँ। आर्यावर्त, मालवा, अवन्तिका, शूरसेन इत्यादि सबही मेरे देखेहुये हैं। आप स्वयं इन सब बातों को जानते हैं; क्योंकि मैं आपहीके द्वारा गुप्तदूत बनाकर वहाँ भेजागया था।

मिहिरकुल। वज्रदण्डका निवेदन औचित्यकी सीमा से कुछ कमहै अरे भाई मैं इस से भी कुछ अधिक करके दिखलादूंगा।

लोह दण्ड। क्यों महाराज, पुस्तकालय, विद्यालय और विहार--उद्यान में घोडों के लिये घास और लड़ने के लिये हथियार रक्खेजाते हैं। कदाचित् यह न हो, हाँ, हाँ, आर्यलोगों की सुन्दर सुन्दर कोमलकोमल स्त्रियाँ रहती होंगी।

मिहिरकुल। (हँसकर) एह ! तुमको भारतमें आये इतने दिन हुये, पर अभी आर्यों की रीति भांति और उनकी बोली भी न जानी ! कहो तो किसी आर्य पण्डित को पकड़वा मँगावें उसके कान उखाड़, और आँखें फोड़कर, सब समझलेना। (सब हँसतेहैं) हमें तो इन वस्तुओं को नष्ट करते करते और जलाते जलाते, उनके नाम याद

होगये हैं। मैंने कम से कम चार चार सहस्र पुस्तकालय, विद्यालय और विहार-उद्यान तो अवश्यही नष्ट किये होंगे। तिसपर दिल्लगी यह है कि, ये मैंने स्वयं अपने हाथ से जलाये हैं। अन्य सैनिकों से जलाये हुओं की तो कुछ गिनतीही नहीं है। हमारे पिताने तो इस सुकर्म में अद्वितीय नाम लूटा था, अब हमारा हमारे जी में है। पुस्तकालय उसे कहतेहैं जिसमें पोथियां पत्र इत्यादि रक्खे जावें, विद्यालय वह है जहां पर लड़के पत्रों पर कुछ काला काला कियाकरते हैं और पिट पिट कर लड़के योग्य होते हैं। विहार-उद्यान में घोड़ों के चराने के लिये घास, पात, भाजी और स्त्रियों के लिये फूल पैदा किये जाते हैं।

लोहदण्ड। (विस्मयसे) तौ तो आर्यलोग बड़े असभ्यहोते हैं। बौद्ध भी उनसे कुछ कम नहीं होते। पीले पीले भाँगे डाले स्वांग भरे रहते हैं। इन केचुओं को भी कुचलेंगे।

मिहिरकुल। अच्छा, अब सभा तोड़ौ। (लोहदण्डसे) तुम से कुछ एकान्त में कहनाहै।

(एक एक करके सब जाते हैं, मिहिरकुल और लोहदण्ड साथ साथ जाते हैं)

दूसरा अङ्क ॥

पहिला गर्भाङ्क ॥

रन्थम्भौर ॥

उद्यान ॥

(सेनापति ऊदल और रानी पद्मावती का प्रवेश ।)

पद्मावती । भइय्या ऊदल! बताओ आजकी संध्या किस तरह बिताओगे ? दिनभर तो तुम अपने जेठे भइय्या की सेवा और स्वदेश सेवाकी चिन्ता में लगे रहतेहो; उधर मैं भी रणवास-शासन में लगी रहती हूँ । इस समय हम तुम दोनों को समय मिला है । देखो उद्यान की हरियाली मस्तिष्क तन्तुओं को कैसा हरा भरा कररही है । नवीन, कोमल, सुगन्धित खिले हुये पुष्प, शीतल, मन्द वायुको अठखेलियों के साथ मस्तक में क्रमशः नवीनता, बारीक-विचारकी कोमलता, अच्छे विचारों की सुगन्धि और मस्तिष्क की बड़ी सहायकारी प्रसन्नचित्तता को कैसा वर्द्धमान कररहे हैं । तुम प्राचीन आर्य-वीरों की एकाध ऐतिहासिक कहानी और हूणोंका संक्षिप्त इतिहास सुनाओ, मैं तुम्हारे वेदान्त-प्रश्नोंका उत्तर दूँगी ।

से० ऊदल । भावजमाता ! आपके मस्तिष्क में वेदान्त ने एक प्रकार की सारग्राही शक्ति उत्पन्न करदी है ।

आप बारीक बातको तुरन्त ग्रहणकर लेती हैं। हमारी बुद्धि तो कुछ कुण्ठितहै। हम तो सैनिक हैं, केवल लोहे का विज्ञान और युद्धका वेदान्त जानतेहैं। हमतो व्यूह, अस्त्र और शस्त्र का योग जांनते हैं, आत्मा और मृत्यु हमारी समझ के परे हैं। हां आपकी कृपा से वेदान्त में कुछ चसका लगचला है।

पद्मावती। कुछ भी हो, तुम्हारी बुद्धि अन्य सैनिकों की तरह खुरखुरी नहीं है। तुम बातको बहुत शीघ्र समझ लेते हो, और फिर उसमें से पेचीदा प्रश्न भी करसकते हो। (हँसकर) अच्छा तो पहिले इस रूखे विषयको निपटालें तब तुम्हारीसलौनी कहानी को सुनें। सुनो–

से० ऊदल। (बातकाटकर) मुझे योगदर्शन अधिक भाता है। वह क्रिया बतलाइये, जिससे मनुष्य सूक्ष्म–शरीर से, बाहर जाकर, चाहें जो कामकर आता है। पृथ्वीभर की सैर भी तो योग के सहारे की जासकती है।

पद्मावती। वही तो कहती हूँ। ध्यान देकर सुनोः—प्रत्येक मनुष्यके शरीर में दो शरीर हैं, एकसूक्ष्म और एक स्थूल। पहिला अन्तर, मेधा और मस्तिष्क शक्ति के प्रयोगमें आताहै। स्थूलशरीर से बाहरी काम होते हैं। रातको हम जो स्वप्न देखते हैं, वे सब इसी सूक्ष्मशरीरकी कार्यवाही के प्रतिफल हैं। जब मनुष्य सोजाता है, तब

उसका सूक्ष्म शरीर बाहर जाता है और जो जो वह देखता, सुनता और करता है, वह सब उसे भेजे में दिखाई पड़ता है। भेजेकी आंख बहिप्रान्तीय आंख से कुछ थोड़ासा सम्बन्ध रखती है। इसपर यह प्रश्न उठ सकता है कि, मनुष्य असत्य स्वप्न फिर क्यों देखता है? इसका समाधान यह है कि, भेजा या मस्तिष्क सबमें एकसा नहींहोता। किसी का दृढ़, बली और शक्तिशाली होता है, और किसीका शक्तिहीन और बलहीन होता है। जिनका भेजा बली होताहै, वे स्वप्न कम देखते हैं, पर जो देखतेहैं, वह सच्चा देखते हैं। यदि शक्तिशाली भेजेवाले योग-कियाकरें, तो उन्हें शीघ्रही सफलता प्राप्त हो। शक्तिहीन वालोंको, और शक्तिशालीवालों को भी, वीर्य-रक्षा का बड़ाभारी विचार रखना चाहिये। यदि ऐसा होगा और खटाई मांस व अधिक लोनी वस्तुयें भोजन-व्यवहार में न लाई जावेंगी, तो अच्छे फल दूर न होंगे। इस क्रिया के करने के पहिले विचारों का दृढ़ करना सीखना चाहिये। इसका यह प्रयोजन है कि, भेजे में तरह तरह की बातें मतआनेदो, तरह तरहकी बातें आने देना यानी पवन मण्डल पर हवेलियां बनाना बड़ाभारी दुर्गण है, यह मस्तिष्क में विकार उत्पन्न कर देता है। जिससमय क्रिया करनेवाला यह जानले कि, वह भेजेके अधिकार में नहीं;

किन्तु भेजा उसके अधिकार में है, तब क्रियाका आरम्भ करे। घी, दूध और शीघ्र पचनेवाले पदार्थ खाओ। अब सोते रहने पर भी रात्रिको तरह तरह के मन चाहे काम, किसतरह से कर आसकते हैं, उसका वर्णन करतीहूँ। जब देखलो कि, अब मस्तिष्क अधिकार में होगया है, तब पहिले दिन सोते समय, सब विचारों को इकट्ठाकर, यह दृढ़ करलो कि, मैं असुक समयपर अवश्यही जाग उठूँगा। जब अच्छी तरह नींद आने लगे तब शय्या ग्रहणकरो। अवश्यही निश्चित और नियमित समय पर जाग उठोगे। जिस समय जागो, तुरन्त शय्यासे अलग होकर शौचादि से निवृत्त हो, व्यायाम करो। ऐसा दो तीन दिन करो। इसके उपरान्त फिर सूक्ष्मशरीर को छोटे छोटे कामों के करने के लिये विवश करो। जब १५। २० दिनमें अभ्यास अच्छा होजावे, तब और कामों के करनेकी चिन्ताकरो। पहिले पहिले तुम काम तो सब कर आया करोगे, पर तुम्हें उसकी कुछ सुधि न रहा करेगी, यानी तुम यह न जानसकोगे कि, मैं असुक काम करआया हूँ। धीरे धीरे पूरी सुधि भी रहने लगेगी। कभी कभी ऐसा होजाता है कि, क्रिया कर्ता को निश्चित काम करतेमें देर लगजाती है और वह देरमें शय्या का त्याग करताहै। उसको देरतक सोताहुआ देखकर, चिन्तित नहीं होना

चाहिये। औषधि उपचार और उसको हठात् और बलात् जाग्रत् करना, अत्यन्त बुराहै, एवं निषेध है। हां, यदि अतिकाल व्यतीत हो-गयाहो तो सेवकों या घरवालों को चाहिये कि, उसके मुखपर दूरहीसे अपने मुखकी फूकें मारें, निकट से फूक मारनेसे निद्रा और भी गाढ़ीहोगी दूरसे रूमालकी हवा करनाभी अच्छी चिकित्सा है। जिस समय सूक्ष्मशरीर बाहर चलाजाता है, उस समय सूक्ष्मशरीर और स्थूलशरीर स्थित हृदय के बीच में बिजली का तार बँधजाता है। यह सूक्ष्मशरीर बिजली की तरह लोहे की दीं-वाल में भी होकर जासकता है क्रियाकर्ता का आचरण बहुत पवित्र होना चाहिये और उसकी इच्छाएँ और बासनाएँ कुरुचि पूर्ण न होनी चा-हियें। इस क्रिया का प्रयोग अधिकतर परो-पकार में करना चाहिये। ऐसा करने से बड़ी सफलता प्राप्त होगी। एक बात औरहै, नास्तिक को इस क्रिया के करने का स्वप्न में भी विचार न करना चाहिये। जिनका अन्तःकरण संयम और नियम से शुद्ध होगया है, जो ईश्वरके कृतज्ञ हैं और उसका ध्यान रखते हैं; वह वर्गी मनुष्यों पर प्रेम रखते हैं, वे तुरन्त सफलता गहेंगे।

से०ऊदल। और पृथ्वी भरकी सैर कैसे कीजासकतीहै?

पद्मावती। (मुस्कराकर) ठहरो भइय्या, बतलाती हूँ।

इसी रीति से कीजासकती है पर इसके लिये दूसरी क्रिया भी है। ध्यान देकर—

(राजा युद्धवीर का यकायक प्रवेश)

युद्धवीर। (स्वगत) ऊदलको हम ऐसा नहीं जानतेथे। हम समझते थे कि, इसका चरित्र बहुत उज्ज्वल है और इसका आचरण बहुत निर्मलहै। ओह! मैं नहीं ज़ानता था कि, चन्द्रमा भी कलङ्की है। यह देखो, यह सर्पिणी इसके साथ बैठी बैठी कैसी अठखेलियां उड़ा रही है। तभी पापिन को हमारा रति-दान नहीं भाता। ओह! ऊदल मेरा अनुज ऊदल,—वह ऊदल जो सदा मेरी आज्ञा में रहा करता है। ऐसा पापीहै। ऐसा राक्षस है। छिः! छिः! जिस वस्तु का विश्वास कर, मनुष्य उसे पतियाता है। वही ढोल के भीतर पोलसी निकलती है। देह का सम्पूर्ण रक्त मेरे मस्तक में आकर, उबल रहाहै, हाथ चाहते हैं कि, इस पापी का शिर धड़ से उतारकर हवा में उड़ादो। पर नहीं, ठहरना चाहिये। उद्धता अच्छी नहीं होती। जो लोग समझबूझकर, काम नहीं करते, उनका परिणाम पश्चात्ताप के सिवाय कुछ नहीं होता। मैं परीक्षालूंगा और सोने की परख कड़ी आंच में करूंगा।

(प्रस्थान।)

---

१ हमें इस क्रिया का अभी पूर्णतया अनुभव नहीं हुआहै। अनुभव और सिद्धि प्राप्त होनेपर, हम अपने सुखान्त नाटक चन्द्रगुप्तचमत्कार में बोद्धों के दर्शन शास्त्र के साथ इसका भी विवरण देंगे।

से०ऊदल। (उदासी से) माता! भाई इसतरह से आकर लोट क्यों गये?

पद्मावती। (घबराकर) तुम यहांसे चलेजाओ। मैं अभी जाकर, उनपर अपना भाव प्रकट करे देती हूँ और सत्य सत्य सुनाये देतीहूँ। (कानोंपर हाथ रखकर) उन्हें कुछ सन्देह हुआहै। जगदीश! शरणमें लो।

(गमनोद्यत)

से०ऊदल। मां, मां, हूणों[1] का संक्षिप्त इतिहास—

पद्मावती। (जाते जाते बात काटकर) जब ईश्वरकी कृपा होगी तब सुनाना।

(सेनापति ऊदलका भी प्रस्थान)

---

१ हूणों का भारत में आगमन कहां से हुआ और वे कैसे थे, यह और उनका संक्षिप्त इतिहास हमारे "अञ्जना रञ्जन" नाटक में देखिये। हम उसे यहां दुहराना नहा चाहते।

दूसरा गर्भाङ्क ॥

रन्थम्भोर ॥

महल से सटाहुआ उद्यान ॥

(एक झरोखे में उमा बैठी हुई है)

(राग सारंग)

उमा । " सुन्दर मुखकी बलि बलि जाउँ । लावनि निधि, गुणनिधि, शोभानिधि, निरखि निरखि जीवत सब गाउँ ॥ अङ्ग अङ्ग प्रति अमित माधुरी प्रगटत रस रुचि ठाउँ ठाउँ । तामें मृदु मुसक्यान मनोहर न्याय कहत कवि मोहन नाउँ ॥ नैन सैन दै दै जब हेरत तापर हों बिनमोल बिकाउँ । सूरदास प्रभु मदनमोहन छबि यह शोभा उपमा नहिं पाउँ" ।

(सेनापति ऊदल आता है)

(राग मलार)

से० ऊदल । "कहां लौं राखें हिय मन धीर ? सुनहु मधुप अपने इन नैनन अनदेखे बलबीर ॥ घर आंगन न सुहात रैन दिन बिसरे भोजन, नीर । दाहत देह चन्द्र चन्दनहैं अरु वह मलयसमीर ॥ पुनि, पुनि उहै सुरति आवत चित चितवत यमुना तीर । सूरदास कैसे बिसरत हैं सुन्दर श्याम शरीर" ॥

उमा । (स्वगत) यह किसका स्वर है ? इस समय बाटिका में कौन अलाप रहा है ? क्या केतकी के

ऊपर भौंरे मन्ना रहे हैं ? अथवा इस दीन वाटिका की शोभा बढ़ाने के लिये गन्धर्व इत्यादि स्वर्ग से उतरे हैं ? नहीं, शब्द तो मनुष्यकासा मालूम होता हैं। (हँसकर) वाह ! वाह !! मैं भी क्या बेसुधि हूँ ! चन्द्रमाके दर्शनकी दिनभर से आशा लगाये चकवी यदि उसके नभस्थ होनेपर उसी के लिये चिन्तित होने के कारण, उसे न चीन्हें तो लज्जाकी बात है।

(राग बिहाग)

से० ऊदल। मधुकर तजदो सिगरी आस। केतकि के फूलहुँ में कांटे निकरे नास, उजास। छोड़ो पुहुप बसो बन जाके, अब जनि करहु हुलास॥
धीरज धर, काया सँभाल के जाओ चण्डी पास।
केतकिकी चिन्ता कछुनाहीं, धरहुन हीय निरास॥
एक कहा सो चाहन हारे लेहैं वापै साँस।
जाउ भ्रमर अब काम नहींहै, लेहु न और उसाँस॥
जगमें अब का का नहिं होवे, काटो अब यहफाँस।

(राग देश बिहाग)

उमा। कहा यह बैन उचारत आज ? यह कैसी निठुराई धारी कहँ जावत ? किहिकाज ? का निज परतिज्ञा की सुधिहू भूलेहो तज लाज ? तीखे बिषमय बाण भरत कह ? कारण को है साज ? हे प्यारे अमृतधर ! दृढ़ प्रतिज्ञी कैलास, निर्भय गङ्गाजल, धीर, वीर और कभी रणसे विमुख न होनेवाले सेनापति, क्या तुम्हारेही ये निष्ठुर वचनहैं ? आप

स्त्री का हृदय नहीं पहिचानते। पुरुष समुद्र की तरह गम्भीर और हिमकी तरह निष्ठुर होताहै; धैर्य्यहीन होताहै। तनिकहीसी आंधी चलनेपर समुद्र घबराकर, हिलोड़ें मारने लगताहै, उसी प्रकार तनिकसी गर्मीपाकर हिमभी पानी होजाती है, पर स्त्री का हृदय ऐसा नहीं है। उस का हृदय हीरे की भांति दृढ़-प्रतिज्ञी होता है। चाहे कष्टों और दुःखों के लाखों घन पड़तेजायँ पर स्त्री का हृदय--हीरा अपने व्रतसे नहीं टलता।

से०ऊदल। (गद्गदहो) धन्यहो, धन्यहो! प्यारी, सतीत्व परही भूमण्डलकी कीली घूमतीहै। यदि इसका अभाव होजाय, तो इस मण्डल का चिह्न भी न दिखाईदे, एक पृथ्वी इस ब्रह्माण्ड से चिह्न हीन होजाय। प्यारी समय नहीं है; अवकाश नहीं है, सेना पंक्तियों में बँधी खड़ीहै। मेरी कमर का खाँड़ा स्वदेश--रक्षार्थ खड़ खड़ा रहाहै। आज्ञा दो, आज्ञादो, बिदाकरो। मैं जाताहूँ।

उमा। (गम्भीरता और तेजस्विता से) रण में जाते हो? यह सुनकर प्यारे, कलेजा टूक टूक हुआ जाता है। हाय, क्या मैं आपकी चरण--सेवाके लिये आपके साथ न चल सकूंगी? अवश्य चलूंगी। यातो मेरे तन-मन-दोनों आपके साथ जावेंगे; या अकेले प्राणही। मुझे अधिक नहीं कहना है। स्वदेश—रक्षार्थ आर्य-महिलाएँ भी खांड़ा हाथमें लेसकती हैं, या नहीं, इसीकी

परीक्षा देनेके लिये मैं भी आपके साथ चलूंगी।

से०ऊदल। (चिन्तित सा हो) तुम्हारे पिता ?——

तुम्हारी माता ?——ऐं——

उमा। (अधिकगम्भीरतासे) कुछ नहीं। स्वदेशके सामने माता पिता कुछनहीं; निश्चयही कुछ नहीं। ऐसा कोई भी आर्य स्त्री पुरुष कायर, पामर और नीच न होगा जो स्वदेश के लिये प्राण देना न जानता हो। आपको शीघ्रता है ? ठहरिये, मैं भी चलती हूँ।

(जातीहै और फिर बीर-भेष करके, आती है)

उमा। चलिये मैं तय्यार हूँ।

(दोनों गमनोद्यत)

उमा। (अति गम्भीर से)

(ईमन कल्याण)

सब स्वदेश हित देओ निज निज प्रान। पामर, नीच न बँनियो कोई, रखियो यहही ध्यान॥ मातृ-भूमि हित तन मन देहैं, रखिहैं अपनो मान। यदि ब्रह्माहू बाधादे हैं; उनहूँ, न करि हैं कान॥ उठो उठो सब भारत-भ्राता, हूणन बैरी जान, आर्य पिताकी जय जय बोलो, कर स्वदेश रस पान।

(दोनों गये।)

तीसरा अङ्क ॥

पहिला गर्भाङ्क ॥

बन पर्वत ॥

(आर्य भेष में लोहदण्ड हूण आता है)

लोहदण्ड। (स्वगत) अहाहा, अब तो सब तो काम सिद्ध हुये ! (उछलता है) यदि मिहिरकुल राज ने अच्छी भांति न समझादिया होता तो कलई खुलजाती। आर्य लोगोंकी भाषा से तो परिचित होगया हूँ, पर उनके व्यवहारनहीं जानता; यही तो कठिनता है। (घूमकर) भारत--विजय की डोरी कदाचित् बहुत शीघ्रही हूणों के हाथों आवेगी। अहा ! प्रसिद्ध जन--संहारक, पृथ्वी--बिनाशक वीर--शिरोमणि तिरोमणिकी आत्मा सन्तुष्ट होगी। (आश्चर्य से) बज्रदण्ड और ऊदल में बिलकुल अन्तर नहीं मालूम होता, इसका क्या कारणहै ? दोनों का एकसा रंग, एकसा डील--डौल, एकसारूप और एकसा माथा है। केवल आंखोंमें अन्तर है। ऊदलकी आंखोंमें डरावने लाल लाल डोरे पड़े हुये हैं, वज्रदण्ड की आंखें बिलकुल साफ़ हैं। (उछल कर) तब भी मतलब गठजावेगा। (पैर कुचकाकर) उफ़ थकगये हैं ! ज़रा बैठकर, वेही

दो गीतगावें जो रन्थम्भोरके राजाकी आमोद-मण्डली में सुनकर रट डालेथे। (बैठताहै) (रुककर) अरे, वे तो भूलगये ? (कुछसोचकर) कदाचित् एक बसंत का रागथा और दूसरा कहरवा उनका ढंग तो मालूमहै, पर असली विषय भूल गये। (कुछगुनगुनाताहै) (प्रसन्नहोकर) हम भी तो बड़े बड़े पग्गड़ वाले आर्य पण्डितों की तरह कुछ गीत बनासकतेहैं। (शिर हिलाकर) जिसमें अपनी रुचिहो वही करना चाहिये, अपनी बनाई हुई हरएक वस्तु अच्छी लगतीहै। अच्छा तो लो (कुछ सोचताहै) तो पहिले बसन्तही गावेंगे।

(राग बसन्त)

गदहे चहुँ लोटैं चैनपाय, आगम बसन्त प्रफुलित जनाय। खेतन में फूले धान सेत, मानों दधिको छिरक्यो निकेत, गदहा बोले रव फार फार, करदेवै सब दुख छार छार। सब बिरछा फूले डार डार, जसलग किल्ली गोथन मँझार। कोयलिया कूकत बार बार, गदहा सों पैखा जात हार। फूलन अब नीमहुँ लगे एन, मानो चाँवल के बने एन। बेला इम फूल्यो बागमाँझ, बमनी[1] जिम बीटै बीच साँझ। बोधे सन्तन अब भख्यो स्वांग, पीरेपीरे लटकाय झाँग, लेवें देवें कछ हार हार, मानों देवें, लेवें उधार।

१ बमनी एक प्रकार का पक्षी होता है। इसका विष्ठा श्वेत में कुछ पीलापन लिये हुये होता है।

(सामने से वज्रदण्ड चार हूणों के साथ आता है)

लोहदण्ड। (स्वगत) ये लोग कौन हैं? (घबराकर) सेनापति ऊदल आरहा है! अब फँसे! मालूम होता है इसने हमारी बात समझली, और भेद जान लिया। (भागनेका प्रयत्न करता है) परन्तु भागने से क्या होगा? तलवार लेकर खड़ा होजाना चाहिये। (तलवार हाथ में ले, संभलता है) अब आवें सामने तो समझूँ! (हूणोंको देखकर) सर्वसत्यानाश! क्या आपत्ति है! ये हूण भी ऊदल के साथ! क्या ये हूण सरदार मिहिरकुलराज से फिर गये हैं? अच्छा इन सब लोगोंको देखूंगा। मैं तलवार बहुत अच्छी फेंक जानता हूँ। ऐसी क्लैंची बांधूंगा कि, मेरे ऊपर एक कङ्कण भी नहीं आसकेगा।

वज्रदण्ड। (लोहदण्ड को आर्य भेष के कारण न पहिचान कर)

(राग भूप तालझप)

खोलो खोलो म्यानसों खड्ग रङ्ग रणकेर माचा छातीमें ठेलो। ठेलो हेलो, पेलो युद्ध छटा अब खेलो पेलो छाती में सेलो। माथा चोटौ, गाथा फोटौ सिर काटौ, डाटौ, फाटौ सारी देहा। दण्डा सों भण्डा कण्डासे बिलगा लूटौ, कूटौ बरसा रक्तमेहा।

लोहदण्ड (सदर्प तलवार घुमा)

(राग जैजै वन्ती झपताल)

शेर बबर मरू मरू कतर कतर युद्धवीर में खि-

लाउँ जायस्यार, सिंह हहर हहर मार, घहर घहर मेघ बाज फेकत हूँ तल्लवार। एक अजाकाट प्रात अजा एककाट सांझ, खाय जात काट, छाँट। खम्म ठोक हम्म खड़े, खड्ग खोल आय डटे, आय लरो कहत डाट।

{ प्रणाम वाचक तलवारके पैंतरे से तीन हाथ साफ़कर, कैंची की तीन नोकें बैठकों समेत फुर्ती से देकर, हाथ तलेका पटा करता है। }

बज्रदण्ड। (आश्चर्य से) अरे क्या लोहदण्ड ? क्यों जी, क्या क्रोध के मारे मेरी बोली भी न पहिचान सके ? अभी कैसा बुरा रक्तपातहुआहोता! भला हमने तो तुम्हें आर्य समझकर धमकाया था, पर क्या तुमने हमें नहीं पहिचाना ?

चारों हूण। आश्चर्य है! आश्चर्य है!

लोहदण्ड। (तलवार अलगरखकर) ओह, कितनी बड़ी भारी भूल है! मित्र बज्रदण्ड, काम सिद्ध होगया। सचमुचही हमही धोके में आगये। पहिले पहिले हमारीही ऊपर धोके में आक्रमण किया! आश्चर्य है ?

बज्रदण्ड। कैसा धोका ? इस में तो कोई गुप्त भेदहै।

लोहदण्ड। पहिले हमें यह बताओ कि, हूण—छावनी कहां है ?

बज्रदण्ड। हूण छावनी कहरोर के मैदान से ४३ मील उत्तर—पूर्व पड़ी है। यहांसे ठीक पूर्वमें ६० मील की दूरी पर है।

लोहदण्ड। तो हम लोग अभी रन्थम्भोरही की सीमामें पड़े हुये हैं ?

बज्रदण्ड। अवश्यमेव, यहांसे शीघ्र चलना चाहिये। परन्तु क्या हमें वह भेद न बतलावोगे, जिसके जानने की हमें उत्कण्ठा है।

लोहदण्ड। हां, हां, बतलावेंगे,
यहां से तो चलो।

(सब गये।)

दूसरा गर्भाङ्क ॥

उज्जैन ॥

महाराजा यशोधर्म्मन का राजमहल ॥

(यशोधर्मन पलँग पर लेटाहुआ है ।)

यशोधर्मन । (स्वगत) सर्वसत्यानाश ! सुना है कि, हूण–छावनी में एकदेश द्रोही आर्यभी है । और वह भी ऐसा कि जो हमारे घरके सम्पूर्ण भेदों को जानता है । हा ! ऐसा कौनसा नराधम कुलाङ्गार होगा जो अपनेही घरमें आग लगाए, अपनीही माताको सताए और अपनेही कुलका नाशकरे ? पर यह भी सम्भव है । रत्नोंकी खान में क्या पत्थर नहीं होते ? क्या सोने के साथ मिट्टी नहीं मिलती ? क्या बनमें सिंहही सिंह होते हैं ? क्या मानसरोवर पर बगुले नहीं होते? अवश्य होते हैं; यही कारणहै कि, स्वदेश–भक्ति के आदर्श भारतवर्ष में भी स्वदेश-द्रोही नराधम पैदाहोने लगेहैं । हाय ! हूण टिड्ढी दलकी तरह भारत–उद्यान को उजाड़ करते चलेआतेहैं इसका उपाय सिवाय भीषण और प्रचण्ड युद्ध के और कुछ नहीं होसकता । (कुछ सोचकर) उस देश––द्रोही अनार्यका क्या नाम है, क्योंकि हम उसे आर्य नहीं कहसकते जो स्वदेशभक्त नहीं हैं ? सुनाहै कि, वह क्षत्रिय है ! छिः ! छिः ! क्या

क्षत्रियभी स्वदेशद्रोही होसकते हैं ? कलियुग है, चाहे जो होवे; अथवा भारतका अभाग्योदयहीहोगा! सुनाहै कि, वह सुन्दर भी बहुतहै। छिः ! छिः ! गुलाब के वृक्षमें काँटे और पलाश के सुन्दर पुष्प में सुगन्धि का न होना ये सब बे मेल बातें हैं। क्या किसीके ध्यानमें आसक्ताहै कि, सुवर्ण घटमें विष भराहोगा ? ये सब बातें उस नराधमक्षत्रिय के ऊपर भलीभाँति घटित होतीहैं। आह ! गोरी खालके नीचे बिषैला रक्त बहताहै ! (कुछ अकुलाकर) जिसतरहै से हो पहिले उस घरके भेद ही को नर्क-यात्रा कराना चाहिये। काँटा निकाल डालने परही मनुष्य चलनेयोग्य होता है। पैर में यदि कांटा लगाहो, तो एक बड़ाभारी मल्ल भी मार्ग नहीं काटसक्ताहै। इस कांटे का निकालना अत्यावश्यकहै। मैंने उस क्षत्रियको मारडालने के लिये गुप्तचर भेजेहैं। स्वदेश-द्रोही का मार डालना, चाहे वह ठण्डे रक्तही में क्यों न हो, पापनहीं। (करवेटें बदलकर) आज निद्रा नहीं आती, क्या कारण है ? (बैठजाताहै) अच्छा कुछ गाऊं, इसीतरह से निद्राका आवेश होने लगेगा।

(राग कालिङ्गड़ा)

गाताहै)—नींद नहिं आवत मोकहँ आज। सोच्यो सब बातन कहँ मैंने, आई एक न काम,—सरिता, नाले, जंगल, पर्वत, सोच्यो, —उपबन साज,—

युद्धभयानक, मल्लयुद्धहू औसोच्यो चौगान, ये सब निष्फल; नींद न आई, सरिये अबका काज? निद्रा देवी! कृपाकरो अब, अधिक नमोहि सताओ, अर्द्ध रात्रिहू बीति गई है, दिनकी राखो लाज। सन सन सन सन पवनचलतहै पल्लवखेड़, खर्रात, सुन्न सध्यो इहि समय जगत्‌में; कोउ आवत नहिं जात; केवल शठ अरु चोर फिरतहैं, फिरत अहैं जीहन्त अपनिहि स्वास सुनाइ परत है, जस नभजागे गान भुवन अकेलो पाकेसबही, करत अहैं निज चोट, चन्दाहू जल्दी पथ काटत; शोभित है नभ आज।

एक कोने में छिपा खड़ा हुआ बज्रदण्ड। (स्वगत) क्याहम क्षत्रियहैं, तो हमें जो हमारा स्वार्थ साधे उसका काम न करना चाहिये? पर हम अपनेही देशके नाशके हेतु होते हैं? (कम्पायमान होकर) देहमें यह फुरफुरी कैसी उठरही है? क्या यशोधर्मन को न मारें? (सँभलकर) मैं इस समय इतना निर्बल क्यों हुआ जाताहूं? मेरा हृदय यशोधर्मन के साथ सहानुभूति प्रगट करने को क्यों उकता रहाहै? (अधिक दृढ़ होकर) उँह! यह सब कुछ नहीं है, जिस बज्रदण्ड ने अपने बज्रदण्ड से सहस्रों मनुष्यों के मस्तक उड़ादिये उसके लिये एक यशोधर्मन का मारना क्या कठिन है? (फिर निबर्ल होकर) तो क्या मैं उसे मारडालूं, जिसने अपनी मातृ-भूमि के बचाने का